Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
January-June 2022 3(1), 885–891

ANALYTICAL STUDY OF INDIAN VALUES AND PHILOSOPHY EMBEDDED IN THE PREAMBLE OF THE INDIAN CONSTITUTION

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में निहित भारतीय मूल्य और दर्शन का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Rakesh Kumar Jaiswal [1]

[1] Assistant Professor, Department of Political Science, Government College, Badaun, U.P.

DOI
10.29121/shodhkosh.v3.i1.2022.4729

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2022 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

English: The Preamble of the Indian Constitution is a concise description of the guiding principles and aspirations for the upliftment of the nation, encompassing a broad vision. This research paper delves deeply into the philosophical foundations underlying the Preamble of the Indian Constitution. This paper explores the Indian values and ideals embodied in the Preamble and highlights their implications for the constitutional framework. Through an analysis of the historical context, the debates and philosophical influences of the Constitution makers at the time of the Constitution's creation, this research paper explores how the Preamble reflects the Indian values and philosophical foundations of the Indian Constitution. It explores the philosophical foundations of the Preamble, including ideas of social justice and welfare, secularism and democratic governance. It highlights how these principles were shaped by the Indian National Movement, the influence of leaders such as Mahatma Gandhi, Jawaharlal Nehru and B.R. Ambedkar, as well as global thinkers such as Karl Marx and John Locke.

Hindi: भारतीय संविधान की प्रस्तावना में राष्ट्र के उत्थान के लिए मार्गदर्शक सिद्धांतों और आकांक्षाओं का व्यापक दृष्टिकोण को समेटे संक्षिप्त वर्णन है। यह शोध पत्र भारतीय संविधान की प्रस्तावना में अंतर्निहित दार्शनिक आधारों पर गहनता से विमर्श करता है। यह शोधपत्र प्रस्तावना में निहित भारतीय मूल्यों और आदर्शों का अन्वेषण करते हुए, संवैधानिक ढांचे के लिए उनके निहितार्थों पर प्रकाश डालता है। ऐतिहासिक संदर्भ, संविधान निर्माण के समय हुए संविधान निर्माताओं के बहस और दार्शनिक प्रभावों के विश्लेषण के माध्यम से, यह शोध पत्र यह पता लगाता है कि प्रस्तावना भारतीय संविधान के भारतीय मूल्यों और दार्शनिक आधारों को कैसे दर्शाती है। यह सामाजिक न्याय और कल्याण, धर्मनिरपेक्षता और लोकतांत्रिक शासन के विचारों सहित प्रस्तावना के दार्शनिक आधारों की खोज करता है। यह इस बात पर प्रकाश डालता है कि इन सिद्धांतों को भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन, महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और बी.आर. अंबेडकर जैसे नेताओं के प्रभाव के साथ-साथ कार्ल मार्क्स और जॉन लॉक जैसे वैश्विक विचारकों द्वारा कैसे आकार दिया गया।

Keywords: Indian Constitution, Background, Indian Values, Study, Analytical, भारतीय संविधान, पृष्ठभूमि, भारतीय मूल्य, अध्ययन, विश्लेषणात्मक

प्रस्तावना

प्रस्तावना संविधान या औपचारिक दस्तावेज़ का परिचयात्मक कथन है जो दस्तावेज़ के लेखकों के मौलिक दृष्टिकोण ,सिद्धांतों, मूल्यों और उद्देश्यों को रेखांकित करता है। यह एक मार्गदर्शक ढांचे के रूप में कार्य करता है और दस्तावेज़ के बाकी हिस्सों के लिए स्वर निर्धारित करता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना एक संविधान के उद्देश्यों और परिचयात्मक कथन के रूप में कार्य करती है 2 जो इसके मौलिक मूल्यों, सिद्धांतों और उद्देश्यों को रेखांकित करती है। यह जीवन का एक दर्शन है। 3 यह भारतीय संविधान के सार को समाहित करती है। आइए प्रस्तावना के विभिन्न तत्वों का पता लगाएं और देखें कि वे भारतीय संविधान के दार्शनिक आधार को कैसे दर्शाते हैं। प्रस्तावना भारतीय लोगों की आकांक्षाओं और मूल्यों की अभिव्यक्ति

के रूप में कार्य करती है और संविधान के लिए एक रूपरेखा प्रदान करती है।4 यह संप्रभुता, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, लोकतंत्र और गणतंत्रवाद के सिद्धांतों को दर्शाती है। यह न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के प्रति प्रतिबद्धता को भी उजागर करती है। प्रस्तावना इस बात पर जोर देते हुए प्रारम्भ होती है, कि भारतीय संविधान मैं के अहम युक्त भाव और निरंकुश एकतंत्रवाद से मुक्त "हम, भारत के लोगों" द्वारा बनाया गया है5 जिसमें नागरिकों की सामूहिक इच्छा और संप्रभुता पर जोर दिया गया है। यह संविधान के लोकतांत्रिक आधार को दर्शाता है, जहाँ सत्ता भारत की जनता अर्थात लोगों के पास है।

भारतीय संविधान का विकास

भारतीय संविधान का विकास 20वीं सदी की शुरुआत में हुआ और इसमें कई महत्वपूर्ण मील के पत्थर शामिल हैं। 20वीं सदी की शुरुआत में 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का गठन हुआ, जो भारतीय स्वशासन और अंततः स्वतंत्रता की वकालत करने वाला एक प्रमुख राजनीतिक संगठन बन गया। संविधान के प्रारूप के निर्माण के क्षेत्र में, पहला प्रयास 1895 में बाल गंगाधर तिलक की प्रेरणा से किया गया था, जब भारत का संविधान विधेयक, 1895 या "तिलक संविधान" तैयार किया गया था। "तिलक संविधान" को राष्ट्रवादियों के बीच मैग्ना कार्टा माना जाता था।13

संवैधानिक सुधारों की मांग 1900 के दशक की शुरुआत में जोर पकड़ी, जब दादाभाई नौरोजी और गोपाल कृष्ण गोखले जैसे नेताओं ने प्रतिनिधि सरकार की वकालत की। मोंटेग्यू-चेम्सफ़ोर्ड सुधार 1919 में अस्तित्व में आए, यह भारत सरकार अधिनियम 1919 था, जिसे मोंटेग्यू-चेम्सफ़ोर्ड सुधार के रूप में भी जाना जाता है, जिसने भारतीय विधान परिषदों में सीमित सुधार पेश किए। इस अधिनियम ने मतदाताओं का विस्तार किया और धार्मिक समुदायों के लिए अलग-अलग निर्वाचक मंडल पेश किए।

हालाँकि, यह स्वशासन के लिए भारतीयों की आकांक्षाओं को पूरा करने में विफल रहा। 1927 में ब्रिटिश सरकार ने भारत में संवैधानिक प्रणाली के कामकाज की समीक्षा करने के लिए साइमन कमीशन की नियुक्ति की।14

आयोग द्वारा किसी भी भारतीय सदस्य को शामिल न किए जाने के कारण व्यापक विरोध हुआ और पूर्ण स्वतंत्रता की माँग की गई। 1930 में महात्मा गांधी ने पूर्ण स्वतंत्रता की वकालत करते हुए सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू किया। ब्रिटिश सरकार ने राजनीतिक सुधारों और भारत के भविष्य पर चर्चा करने के लिए 1930-32 में लंदन में तीन गोलमेज सम्मेलन आयोजित किए। चर्चाएँ संघवाद, अल्पसंख्यक अधिकारों और विभिन्न समुदायों के प्रतिनिधित्व जैसे मुद्दों पर केंद्रित थीं। 1935 में अंग्रेजों द्वारा भारत सरकार अधिनियम बनाया गया था और यह एक महत्वपूर्ण संवैधानिक विकास था। इसने प्रांतीय स्वायत्तता स्थापित की, निर्वाचन क्षेत्र का विस्तार किया और संघीय ढांचे की शुरुआत की, हालांकि इसमें अभी भी महत्वपूर्ण ब्रिटिश नियंत्रण बरकरार था। इस अधिनियम ने भविष्य के संवैधानिक सुधारों के लिए एक खाका प्रदान किया।

बी. संविधान सभा और संविधान निर्माण प्रक्रिया

संविधान सभा का गठन 1946 में किया गया था और इसे संविधान का मसौदा तैयार करने का काम सौंपा गया था। डॉ. बी.आर. अंबेडकर15 ने मसौदा समिति की अध्यक्षता की और विधानसभा के सदस्यों ने विभिन्न संवैधानिक प्रावधानों, अधिकारों और सिद्धांतों पर विचार-विमर्श किया16। संविधान को 26 नवंबर, 1949 को अपनाया गया और 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ। इसे अपनाने के बाद से, भारतीय संविधान संशोधनों और विकास के अधीन रहा है। समाज और शासन में बदलावों को दर्शाते हुए उभरती जरूरतों और चुनौतियों को संबोधित करने के लिए संविधान में कई बार संशोधन किया गया है। मौलिक अधिकारों, नीति निर्देशक सिद्धांतों, बुनियादी ढांचे और सरकार की संरचना सहित विभिन्न पहलुओं में महत्वपूर्ण संशोधन किए गए हैं।

संविधान सभा की भूमिका

संविधान सभा ने भारतीय संविधान के निर्माण और उसे अपनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह निर्वाचित सदस्यों से मिलकर बना एक प्रतिनिधि निकाय था, जिसे स्वतंत्र भारत के लिए संविधान का मसौदा तैयार करने का काम सौंपा गया था। संविधान सभा की प्रमुख भूमिकाएँ और कार्य इस प्रकार हैं:

संविधान सभा की भूमिका

संविधान सभा ने भारतीय संविधान के निर्माण और उसे अपनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह निर्वाचित सदस्यों से मिलकर बना एक प्रतिनिधि निकाय था, जिसे स्वतंत्र भारत के लिए संविधान का मसौदा तैयार करने का काम सौंपा गया था। संविधान सभा की प्रमुख भूमिकाएँ और कार्य इस प्रकार हैं:

संविधान का प्रारूप तैयार करना: संविधान सभा की प्राथमिक जिम्मेदारी भारत के संविधान का प्रारूप तैयार करना था। इसने शासन के विभिन्न पहलुओं, मौलिक अधिकारों, सरकार की शक्तियों, संघवाद और अन्य महत्वपूर्ण प्रावधानों पर विचार-विमर्श किया, जो संवैधानिक ढांचे को आकार देंगे।

समिति गठन: संविधान सभा ने संविधान के विशिष्ट पहलुओं से निपटने के लिए विभिन्न समितियों का गठन किया। इनमें सबसे उल्लेखनीय समिति डॉ. बी.आर. अंबेडकर की अध्यक्षता वाली प्रारूप समिति थी, जो संविधान का प्रारंभिक मसौदा तैयार करने के लिए जिम्मेदार थी। संचालन समिति, संघ शक्ति समिति और मौलिक अधिकार उपसमिति जैसी अन्य समितियों ने विशिष्ट प्रावधानों पर चर्चा करने और उन्हें तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सार्वजनिक इनपुट: संविधान सभा ने संविधान पर जनता से इनपुट और फीडबैक मांगा। इसने नागरिकों, संगठनों और विशेषज्ञों से सुझाव और ज्ञापन आमंत्रित किए, जिससे संवैधानिक प्रावधानों को आकार देने और विभिन्न चिंताओं को दूर करने में मदद मिली।

प्रतिनिधित्व: संविधान सभा का उद्देश्य भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों से पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना था। विभिन्न प्रांतों और रियासतों से सदस्य चुने गए थे, जो विभिन्न समुदायों, धर्मों और क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते थे। सभा में इस विविधता ने संविधान निर्माण के लिए एक व्यापक और समावेशी दृष्टिकोण की अनुमति दी।

स्वतंत्रता संग्राम का अनुभव: संविधान सभा के कई सदस्यों ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रूप से भाग लिया था और उन्हें भारतीय लोगों की आकांक्षाओं और संघर्षों की समझ थी। उनके अनुभवों और दृष्टिकोणों ने संवैधानिक आदर्शों को आकार दिया, यह सुनिश्चित करते हुए कि संविधान एक स्वतंत्र और लोकतांत्रिक भारत की दृष्टि को दर्शाता है

अंगीकरण और अधिनियमन: व्यापक विचार-विमर्श और बहस के बाद, संविधान का अंतिम मसौदा 26 नवंबर, 1949 को संविधान सभा द्वारा अपनाया गया था। संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ, जिसने भारत गणराज्य की स्थापना को चिह्नित किया। भारत की संविधान सभा ने एक व्यापक और समावेशी संविधान तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जो भारतीय लोगों के मूल्यों और आकांक्षाओं को दर्शाता है। इसके काम ने भारत की लोकतांत्रिक प्रणाली, मौलिक अधिकारों और शासन के मार्गदर्शक सिद्धांतों की नींव रखी, जो आज भी राष्ट्र को आकार दे रहे हैं।

प्रस्तावना पर दार्शनिक प्रभाव

अमेरिकी संविधान की प्रस्तावना कई दार्शनिक प्रभावों को दर्शाती है, जिन्होंने संविधान निर्माताओं की सोच को आकार दिया। भारतीय संविधान की प्रस्तावना भी ऐसा ही कर रही है। इन प्रभावों का पता ज्ञानोदय काल के दौरान प्रचलित विभिन्न दार्शनिक परंपराओं और विचारों और आधुनिक लोकतांत्रिक सिद्धांतों के निर्माण से लगाया जा सकता है। प्रस्तावना पर कुछ प्रमुख दार्शनिक प्रभाव हैं जैसे सामाजिक अनुबंध सिद्धांत, प्राकृतिक अधिकार, गणतंत्रवाद, ज्ञानोदय तर्कवाद और प्राकृतिक कानून। यहाँ हम कह सकते हैं कि इन दार्शनिक प्रभावों ने प्रस्तावना को आकार देने में भूमिका निभाई, लेकिन संविधान निर्माताओं के अपने अनुभव, राजनीतिक संदर्भ और व्यावहारिक विचारों ने भी इसकी भाषा और विषय-वस्तु को प्रभावित किया। प्रस्तावना संतुलित और प्रभावी सरकार की खोज में दार्शनिक आदर्शों और व्यावहारिक उद्देश्यों के संयोजन को दर्शाती है।

राष्ट्र की एकता और अखंडता

किसी राष्ट्र की एकता और अखंडता का तात्पर्य उसकी विविध आबादी की एकजुट और एकीकृत प्रकृति से है, साथ ही इसकी क्षेत्रीय अखंडता के संरक्षण से भी है। यह किसी देश के लोगों के बीच राष्ट्रीय पहचान, साझा उद्देश्य और सामूहिक जिम्मेदारी की भावना को बनाए रखने के महत्व पर जोर देता है। एकता और अखंडता को बढ़ावा देने के लिए सरकार और समाज दोनों की ओर से निरंतर प्रयासों की आवश्यकता होती है। इसमें समावेशिता की भावना को बढ़ावा देना, संवाद और समझ को बढ़ावा देना, सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को दूर करना और न्याय, समानता और विविधता के सम्मान के सिद्धांतों को बनाए रखना शामिल है। एकता और अखंडता को महत्व देने और इसके लिए काम करने से, राष्ट्र मजबूत, लचीले और एकजुट समाजों का निर्माण कर सकते हैं जो चुनौतियों का सामना कर सकते हैं और सामूहिक रूप से प्रगति कर सकते हैं। कुछ प्रमुख बिंदु हैं कि कैसे एकता और अखंडता को महत्व दिया जाता है और बढ़ावा दिया जाता है

प्रस्तावना के दार्शनिक आधार का विश्लेषण

भारतीय संविधान की प्रस्तावना एक संक्षिप्त कथन के रूप में कार्य करती है जो भारतीय राज्य के दार्शनिक आधार और उद्देश्यों को दर्शाती है। यह संविधान निर्माताओं की आकांक्षाओं और आदर्शों को दर्शाती है और देश के शासन के लिए मार्गदर्शक26 सिद्धांत निर्धारित करती है। यह भारतीय लोगों की एक संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक और गणतंत्र राष्ट्र की आकांक्षाओं को समाहित करती है, जो न्याय, स्वतंत्रता, समानता और

बंधुत्व के लिए प्रतिबद्ध है। प्रस्तावना उन सिद्धांतों और मूल्यों के लिए आधार तैयार करती है जो भारतीय राज्य के शासन और कामकाज का मार्गदर्शन करते हैं, इसके संवैधानिक ढांचे और नीतियों को आकार देते हैं।

महत्वपूर्ण शब्दों और अभिव्यक्तियों का विश्लेषण

अब हम भारतीय संविधान की प्रस्तावना से कुछ प्रमुख वाक्यांशों और अभिव्यक्तियों पर नज़र डालेंगे और उनके महत्व पर चर्चा करेंगे। प्रस्तावना के प्रमुख वाक्यांश और कथन भारतीय संविधान की मूल मान्यताओं, सिद्धांतों और आकांक्षाओं को दर्शाते हैं। वे व्यक्तिगत अधिकारों के संरक्षण, सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने, धर्मनिरपेक्षता के अभ्यास, लोकतांत्रिक प्रशासन और एक समावेशी और एकजुट राष्ट्र के निर्माण की नींव रखते हैं।

दार्शनिक सिद्धांतों के साथ संरेखण

भारतीय संविधान की प्रस्तावना इन दार्शनिक सिद्धांतों के अभिसरण को प्रदर्शित करती है, जो भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली की आधारशिला हैं। यह संविधान निर्माताओं की एक न्यायपूर्ण, समावेशी और प्रगतिशील समाज के निर्माण की आकांक्षाओं को दर्शाता है जो लोकतांत्रिक शासन को कायम रखता है, व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करता है, सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देता है और राष्ट्र की विविधता और बहुलता का सम्मान करता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना कई दार्शनिक सिद्धांतों के साथ संरेखित है जो भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली यानी लोकतंत्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, समानता, न्याय, स्वतंत्रता और बंधुत्व को रेखांकित करते हैं।

संवैधानिक ढांचे के लिए निहितार्थ

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में निहित दार्शनिक सिद्धांतों का देश के संवैधानिक ढांचे और शासन के लिए गहरा निहितार्थ है। प्रस्तावना में उल्लिखित दार्शनिक सिद्धांत भारत के संवैधानिक ढांचे को आकार देते हैं, कानूनों की व्याख्या, मौलिक अधिकारों की सुरक्षा, सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देने और लोकतांत्रिक संस्थाओं के कामकाज का मार्गदर्शन करते हैं। वे एक न्यायपूर्ण, समावेशी और लोकतांत्रिक शासन प्रणाली के लिए रूपरेखा प्रदान करते हैं जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता को बनाए रखने, सामाजिक समानता को बढ़ावा देने और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने का प्रयास करती है। संवैधानिक ढांचे के लिए प्रस्तावना के कुछ महत्वपूर्ण निहितार्थ हैं, जैसे मौलिक अधिकार, सामाजिक न्याय और कल्याण, लोकतांत्रिक शासन, धर्मनिरपेक्षता और धार्मिक बहुलवाद, न्यायिक स्वतंत्रता और संघवाद आदि।

समकालीन प्रासंगिकता और व्याख्याएँ

भारतीय संविधान की प्रस्तावना समकालीन समय में अत्यधिक प्रासंगिक बनी हुई है और इसकी विभिन्न तरीकों से व्याख्या की जाती रही है। प्रस्तावना की समकालीन प्रासंगिकता उभरती चुनौतियों और विकसित होती सामाजिक आवश्यकताओं को संबोधित करने की इसकी अनुकूलनशीलता में निहित है। न्यायपालिका, विधिनिर्माताओं और नागरिकों द्वारा इसकी व्याख्याएँ कानूनी और नीति परिदृश्य को आकार देती हैं, यह सुनिश्चित करती हैं कि प्रस्तावना में निहित संवैधानिक आदर्शों को बरकरार रखा जाए और देश के शासन में प्रतिबिंबित किया जाए।

प्रस्तावना की न्यायिक व्याख्याएँ

भारतीय संविधान की प्रस्तावना की न्यायिक व्याख्याएँ इसके सिद्धांतों की समझ और अनुप्रयोग को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। हालाँकि प्रस्तावना स्वयं लागू करने योग्य नहीं है, लेकिन संविधान के अनुच्छेद 12 में दिए गए अनुच्छेदों को लागू करने के लिए

प्रस्तावना की न्यायिक व्याख्याएँ

भारतीय संविधान की प्रस्तावना की न्यायिक व्याख्याएँ इसके सिद्धांतों की समझ और अनुप्रयोग को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। हालाँकि प्रस्तावना स्वयं लागू करने योग्य नहीं है, लेकिन न्यायपालिका ने संविधान की व्याख्या के लिए एक मार्गदर्शक दस्तावेज़ के रूप में इसके महत्व को पहचाना है। पिछले कुछ वर्षों में प्रस्तावना की कई प्रमुख न्यायिक व्याख्याएँ सामने आई हैं।

मुख्य न्यायाधीश सुब्बा राव ने गोलक नाथ बनाम पंजाब राज्य31 मामले में कहा था कि “किसी अधिनियम की प्रस्तावना मुख्य उद्देश्यों को निर्धारित करती है जिन्हें प्राप्त करने के लिए कानून बनाया जाता है”। ए.के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य में, "यह तर्क दिया गया कि हमारे संविधान की प्रस्तावना, जिसका उद्देश्य भारत को एक "लोकतांत्रिक" संविधान देना है, इसकी व्याख्या में मार्गदर्शक प्रारंभिक बिंदु होनी चाहिए और अनुच्छेद 21 के तहत पारित कोई भी कानून शून्य होना चाहिए यदि वह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है क्योंकि, यदि ऐसा नहीं होता है, तो जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के तथाकथित "मौलिक" अधिकारों की रक्षा नहीं की जाएगी।

सुप्रीम कोर्ट की पीठ के बहुमत ने इस तर्क को खारिज कर दिया, यह तर्क देते हुए कि अनुच्छेद 21 में 'कानून' शब्द का उपयोग प्राकृतिक न्याय के बजाय राज्य द्वारा बनाए गए कानून को संदर्भित करता है और प्रस्तावना का उपयोग इस व्याख्या को बदलने के लिए नहीं किया जा सकता है।"

उद्देश्य

वर्तमान अध्ययन मानवतावाद और मानवीय मूल्यों पर केंद्रित है जो भारत के संविधान के प्रारूपण के स्रोत हैं

मौलिक अधिकारों की रक्षा और नीति निर्देशक सिद्धांतों को बढ़ावा देने के लिए न्यायिक दृष्टिकोण

परिणाम

मानवतावाद:

मानवतावाद मानवीय मूल्यों का स्रोत है। मानवीय मूल्य भारत के संविधान के निर्माण के लिए दिशा-निर्देश हैं, जिन पर संस्थापक पिताओं का भरोसा है। सामान्यतः मानवीय मूल्य और मानवतावाद एक दूसरे से जुड़े हुए हैं, जिसके द्वारा दुनिया भर में विभिन्न धर्मों का उदय हुआ है। एक तरफ वैदिक धर्म, हिंदू पौराणिक कथाएँ, बौद्ध विचार, जैन दर्शन, कुरानिक साहित्य और बाइबिल के विचार और दूसरी तरफ धार्मिक सहिष्णुता, आधुनिक वैज्ञानिक विचार, उदार राजनीतिक विचार, आधुनिक लोकतंत्र के मूल्य, धर्मनिरपेक्ष जीवन शैली मानवीय मूल्यों का स्रोत हैं। इन सभी विचारों को भारतीय संविधान का मसौदा तैयार करते समय भारत के संविधान के संस्थापक पिताओं द्वारा ध्यान में रखा गया है।

यह अध्ययन वर्तमान जटिल समाज के लिए महत्वपूर्ण है जो विभिन्न बुराइयों के कारण पंगु हो गया है। इन परिस्थितियों में, वर्तमान अध्ययन संविधान में निहित मानवीय मूल्यों के पालन पर जोर देने के लिए किया गया है। भारत के संविधान ने भारतीय इतिहास के दार्शनिक विचारों और मानवतावादी सुधारों को ध्यान में रखते हुए मौलिक अधिकारों और नीति निर्देशक सिद्धांतों के रूप में अधिकांश प्रावधानों को शामिल किया है, जिसने अपार मानवीय मूल्यों को जन्म दिया है। भारतीय संविधान ने अनुसूचित जातियों और जनजातियों, पिछड़ी जातियों, महिलाओं, बच्चों, विकलांगों और वरिष्ठ नागरिकों जैसे कमजोर वर्गों के उत्थान पर जोर दिया है। भारतीय संविधान दलित, दमित, वंचित कमजोर वर्गों की मानवीय क्षमताओं के सुधार के लिए तंत्र प्रदान करता है। निष्पक्ष व्यवहार और असमानता और गैर भेदभाव को दूर करना भारतीय संविधान के तहत प्रदान किए गए मूल्य हैं। यह जातिविहीन वर्गहीन सामाजिक न्यायोन्मुखी समाज की प्राप्ति के लिए समतावादी समाज के विचार को बढ़ावा देता है। इसलिए भारत के संविधान ने सामाजिक न्याय के लिए कोई सीमाएँ तय नहीं की हैं। इस प्रकार यह अध्ययन वर्तमान भारतीय समाज के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है।

चूंकि वर्तमान अध्ययन एक सिद्धांतवादी दृष्टिकोण तक सीमित है, जो “मानव मूल्य और भारतीय संविधान” शीर्षक के तहत संविधान में निहित मानवीय मूल्यों पर केंद्रित है। इस अंतःविषय अध्ययन के लिए, शोधकर्ता ने विभिन्न पुस्तकों, पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, सेमिनारों, सम्मेलनों, संगोष्ठियों, सम्मेलनों के प्रस्तावों और विशेष रूप से भारत के संविधान में दर्शाए गए मानवीय मूल्यों और भारतीय दर्शन और भारतीय इतिहास में निहित मानवीय मूल्यों और अन्य मानदंडों को कवर किया है। शोधकर्ता ने संविधान सभा की बहसों और प्रतिष्ठित लेखकों द्वारा कुछ मौलिक कार्यों से परामर्श किया है, जिन्हें हमारे देश के मौलिक कानून को तैयार करने का दुर्लभ गौरव भी प्राप्त है। शोधकर्ता ने विभिन्न कानून पुस्तकों के अलावा भारतीय इतिहास, भारतीय दर्शन और पश्चिमी दर्शन से संबंधित आधिकारिक पुस्तकों से भी परामर्श किया है। अध्ययन में प्रस्तुत विचारों को पुष्ट करने के लिए संविधान में निहित मानवीय मूल्यों के बारे में पत्रिकाओं में प्रकाशित कई पुस्तकों, लेखों से परामर्श किया गया है।

मानवतावाद के मूल्य:

मानवतावाद के महत्व को इसके मूल्यों के माध्यम से समझा जा सकता है। मानवतावाद अपनी आवश्यकता के कारण समाज में बहुत मूल्यवान है। मानवतावाद में बहुत सारे मूल्य हैं जो मनुष्य को एकता और समायोजन की भावना अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। धार्मिक और वैज्ञानिक कारणों ने मनुष्य को अपने अहंकार और अति अहंकार से दूर रहने के लिए बहुत कुछ प्रदान किया है। मानवतावाद का मूल मूल्य स्वतंत्रता है।

मानवतावाद की भूमिका:

मानवतावाद की भूमिका को कम करके नहीं आंका जा सकता क्योंकि इसने दुनिया भर में व्याप्त तनावों से मानव जाति को मुक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मानवतावाद मानवीय मूल्यों के विचार को विकसित करने के लिए बोया जाने वाला बीज है। प्राचीन समाज से ही मानवतावाद के दर्शन को कन्फ्यूशियस, भगवान बुद्ध, महावीर और सुकरात, अरस्तू और प्लेटो जैसे भौतिकवादी दार्शनिकों द्वारा निर्धारित किया गया है।

मानवतावाद के आधार पर भारतीय संविधान का प्रारूप तैयार करना स्वतंत्रता संग्राम के लिए जिम्मेदार लक्ष्य और कारक: भारतीय स्वतंत्रता संग्राम मानवतावादी दृष्टिकोण के आधार पर लोगों द्वारा शुरू किया गया था। स्वतंत्रता सेनानियों ने स्वतंत्रता संग्राम के माध्यम से प्राप्त किए जाने वाले कुछ लक्ष्य निर्धारित किए हैं। नेताओं के महत्वपूर्ण लक्ष्य हैं गरीबी उन्मूलन, भारत को एक शिक्षित समुदाय बनाना, लोगों को राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक न्याय प्रदान करना, भारत को साम्राज्यवादी निरंकुशता से मुक्त करना और भारत के लोगों को लोकतांत्रिक प्रवृत्तियों के आदी बनाना। इन लक्ष्यों के साथ कई कारक जुड़े हुए हैं जो स्वतंत्रता संग्राम शुरू करने के लिए जिम्मेदार हैं।

संविधान में मानवतावादी विचारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि:

संविधान में मौलिक अधिकारों की गारंटी देने वाले एक अलग हिस्से को शामिल करने का श्रेय ब्रिटिश शासन के दौरान स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में सक्रिय ताकतों को जाता है। यह उस संघर्ष में शामिल लोगों के खिलाफ उठाए गए कुछ दमनकारी उपायों के खिलाफ एक प्रतिक्रिया भी थी। इस टिप्पणी में थोड़ी निंदक भावना हो सकती है कि अधिकारों का विधेयक भविष्य के लिए वादे के बजाय अतीत की बुराइयों के खिलाफ प्रतिक्रिया है, फिर भी यह पूरी तरह से सत्य से रहित नहीं है।

मानव मूल्य और भारत का संविधान

वर्तमान अध्ययन भारत के संविधान के महत्वपूर्ण मुद्दों जैसे मौलिक अधिकार, राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत और मौलिक कर्तव्यों को छूता है।

मानव मूल्य और मौलिक अधिकार:

संविधान के भाग 3 में मूल रूप से सात मौलिक अधिकार दिए गए थे, जिन्हें संपत्ति के अधिकार को हटाने और अनुच्छेद 21A को लागू करने के बाद घटाकर छह कर दिया गया, जिससे 5 वर्ष से 14 वर्ष तक के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का अधिकार सुनिश्चित हुआ, अब फिर से सात मौलिक अधिकार दिए गए हैं, जो भारतीय नागरिकों के चरित्र को आकार देने के साथ-साथ जीवन और सुरक्षा सुनिश्चित करते हैं और समानता और स्वतंत्रता को लागू करते हैं। मौलिक अधिकार भारत के नागरिकों को अपना विकास करने और सरकारी तंत्र में भाग लेने में सक्षम बनाते हैं। वे सत्ता के वास्तविक स्रोत हैं। नागरिकों के समग्र विकास के लिए संविधान द्वारा राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक स्वतंत्रताएँ प्रदान की जाती हैं। मानवीय मूल्यों की पवित्रता को बनाए रखने के लिए भारतीय संविधान द्वारा अपनाए गए सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत भाग IV के अंतर्गत निर्देशक सिद्धांत हैं। संविधान सभा ने निर्देशक सिद्धांतों के बारे में लंबी बहस की है, जिन्हें सामाजिक, आर्थिक और मानवीय सिद्धांतों के कार्यान्वयन द्वारा मानवीय मूल्यों को बनाए रखने के कार्य को पूरा करने के लिए सरकार को निर्देश देने के लिए अपनाया जाना है।

निष्कर्ष

भारतीय संविधान की प्रस्तावना को एक दार्शनिक आधार के रूप में देखा जा सकता है, जिस पर भारत का संपूर्ण लोकतांत्रिक और शासन ढांचा निर्मित है। यह उन मूल सिद्धांतों और मूल्यों को समाहित करता है जो भारतीय लोकतंत्र और शासन के कामकाज का मार्गदर्शन करते हैं। प्रस्तावना की प्रासंगिकता नीति निर्माताओं, विधायकों और नागरिकों के लिए एक नैतिक और वैचारिक दिशा-निर्देश प्रदान करने की इसकी क्षमता में निहित है। यह कहते हुए कि भारत के लोगों ने खुद को संविधान दिया है, प्रस्तावना लोगों की संप्रभुता और राष्ट्र के भाग्य को आकार देने में उनके अंतिम अधिकार पर जोर देती है। यह सिद्धांत भारतीय शासन के लोकतांत्रिक चरित्र को मजबूत करता है और नागरिक भागीदारी और सहमति के महत्व को रेखांकित करता है। इसके अलावा, न्याय, समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व पर प्रस्तावना का ध्यान भारतीय लोकतंत्र को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों के लिए दार्शनिक आधार तैयार करता है। ये मूल्य एक न्यायपूर्ण और समावेशी समाज की आकांक्षाओं को दर्शाते हैं जहाँ प्रत्येक व्यक्ति के साथ सम्मान के साथ व्यवहार किया जाता है और उसे अवसरों तक समान पहुँच प्राप्त होती है। समाजवाद के प्रति प्रस्तावना की प्रतिबद्धता सामाजिक-आर्थिक न्याय और सभी नागरिकों के कल्याण की आवश्यकता को स्वीकार करती है। यह सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को दूर करने और समाज के हाशिए पर पड़े और वंचित वर्गों के उत्थान के लिए नीतियों के माध्यम से समान विकास सुनिश्चित करने के महत्व को रेखांकित करता है। इसके अलावा, प्रस्तावना की धर्मनिरपेक्षता की पुष्टि धार्मिक सहिष्णुता और सभी धर्मों के लिए समान व्यवहार के महत्व पर जोर देती है। यह एक बहुलवादी समाज के सिद्धांत को कायम रखता है जहाँ व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के अपने धर्म का पालन करने के लिए स्वतंत्र हैं। भारतीय संविधान की प्रस्तावना का दार्शनिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करके, इस शोध पत्र का उद्देश्य भारतीय लोकतंत्र को आकार देने वाले मूलभूत सिद्धांतों की हमारी समझ को गहरा करना है। यह प्रस्तावना के ऐतिहासिक संदर्भ, दार्शनिक प्रभावों और समकालीन प्रासंगिकता के बारे में जानकारी प्रदान करता है, जो राष्ट्र के संवैधानिक ढांचे और लोकतांत्रिक लोकाचार को आकार देने में इसके गहन महत्व को उजागर करता है.

संदर्भ

ए.आर. देसाई, भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, लोकप्रिय प्रकाशन लिमिटेड, नया संस्करण, 2005.
अरविदराय एन. देसी, विकलांगों की मदद करना: समस्याएँ और संभावनाएँ, आशीष पब्लिशिंग हाउस 8/81, पंजाबी बाग, नई दिल्ली - कुशल ऑफसेट प्रिंटर्स पर मुद्रित।
आसफ़ फ़िज़ी, ताहिर महमूद, मोहम्मडन लॉ की रूपरेखा, ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 5वां संस्करण, 2009.
बमके लाल शर्मा, प्राचीन भारत में आर्थिक विचार, रामानंद विद्या भवन, नई दिल्ली। 1987.
बसु, दुर्गा दास, भारत का संक्षिप्त संविधान, प्रेंटिस हॉल, 11वां संस्करण, 1994.
बक्सी उपेंद्र, भारतीय कानूनी व्यवस्था का संकट, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, 1982.

चक्रवर्ती, ए.: मानवतावाद और भारतीय विचार, मद्रास, यूनिवर्सिटी प्रेस, 1965.
चालम, के.एस., भारत में जाति-आधारित आरक्षण और मानव विकास, SAGE प्रकाशन, 2007
डी.के. सिंह, भारत का संविधान (वी.एन. शुक्ला) 6वां संस्करण, ईस्टर्न बुक कंपनी; लॉ पब्लिकेशन एंड बुक सेलर्स, लखनऊ, 1975.
डैनियल कोलमैन, द बुद्धा ऑन मेडिटेशन एंड हायर स्टेट्स ऑफ कॉन्शियसनेस, द व्हील पब्लिकेशन, यूएसए, 2008.
डेविड एन. स्नाइडर, द कम्प्लीट बुक ऑफ बुद्धा लिस्ट – एक्सप्लेन्ड, विपासना फाउंडेशन, लास वेगास, यूएसए, 2006.
दुर्गा दास बसु, ह्यूमन राइट्स इन कॉन्स्टीट्यूशनल लॉ, डीप एंड डीप पब्लिकेशन, 1999.
फड़िया, बी.एल. द कॉन्स्टीट्यूशन ऑफ इंडिया, साहित्य भवन पब्लिकेशन, 2009.
एच.एम. शेरवई, कॉन्स्टीट्यूशनल लॉ ऑफ इंडिया (ए क्रिटिकल कमेंट्री) चौथा संस्करण, एन.एम. त्रिपाठी प्राइवेट लिमिटेड; बॉम्बे, स्वीट एंड मैक्सवेल लिमिटेड, लंदन. 1996.
एच.आर. खन्ना, भारत का संविधान बनाना, ईस्टर्न बुक एजेंसी, 2010.
हार्टले ग्रैटन, मानवतावाद की आलोचना- एक संगोष्ठी, बुक्स फॉर लाइब्रेरीज़ प्रेस लाइन, फ्रीपोर्ट, न्यूयॉर्क, 1930 में प्रकाशित, 1968 में पुनर्मुद्रित.
जे. एस्टलिन कारपेंटर, मध्यकालीन भारत में ईश्वरवाद, ओरिएंटल बुक्स रीप्रिंट कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली, पहला भारतीय संस्करण, 1977.